ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 211-213**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

महिला साहित्यकारों की दृष्टि में विकलांग–विमर्श

डॉ0 अनिता सिंह
उपन्यासकार/समीक्षक, बिलासपुर (छत्तीसगढ़), भारत

Received-30.05.2025, Revised-08.06.2025, Accepted-14.06.2025 **E-mail : dr.singhanita315@gmail.com**

सारांशः ***जैसे कृष्ण अधूरे हैं राधा बिन, राम अधूरे है सीता बिन, शिव अधूरे हैं शक्ति बिन, वैसे ही साहित्य अधूरा है महिला साहित्यकारों बिन। जब बिना नारी के सृष्टि की कल्पना नहीं की जा सकती तब बिना नारी के समाज और साहित्य के विकास की बात कैसे की जा सकती है? जब हम समाज को साहित्य से बदलने की बात करते हैं तब इस बदलाव में खरी उतरने वाली महिला साहित्यकारों की लम्बी सूची है, परंतु इन्हीं में से कुछ महिला साहित्यकारों ने विकलांग पात्रों को केन्द्र में रखकर, उपन्यास, कहानी, कविता का सृजन कर, विकलांग–विमर्श की पीठिका प्रमाणित की है। जिन्हें समाज को नयी दिशा देने के लिए हम सदैव याद रखेगें।***

कुंजीभूत शब्द– विकलांग–विमर्श, मानवतावादी विमर्श, नारी अस्मिता, विकलांगता, सांवेगिक अपंग, सहानभूति, कल्पनाश्रित।

इक्कीसवीं सदी के नव्य विमर्श के रूप में विशुद्ध मानवतावादी विमर्श पर आधारित विकलांग–विमर्श पर आधारित प्रथम उपन्यास 'ज्यों मेंहदी के रंग' की लेखिका श्रीमती मृदुला सिन्हा समाजसेवी, चिंतक एवं नारी अस्मिता के लिए समर्पित लेखिका हैं। 'ज्यों मेंहदी के रंग' के माध्यम से पुत्र परिमल की विकलांगता के कारण भोगे हुए यथार्थ का अंकन किया है। उनका मंतव्य है– ''अपने पुत्र स्व. परिमल के प्रति किस भाषा में अपना आभार व्यक्त करूँ। यह सत्य है कि उसकी स्थिति ने ही मुझे इस उपन्यास की रचना के लिए बाध्य किया, कहूँ तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। अपना शरीर क्या ऊँगली भी एक इंच हिला पाने में असमर्थ परिमल अपने अट्ठारह वर्षीय जीवन में दस वर्ष तक हमारे ऊपर पूर्णरूपेण निर्भर था। परन्तु न मैं, न उसके पिता, चाचा अभय सिंह, न दोनों भाई और न नन्हीं बहन मीनाक्षी, किसी ने भी इसकी विकलांगता कबूल नहीं की। हम उसके लिए सामान्य स्थिति निर्माण करने में सक्षम हुए, उसे दीन–हीन समझने के बजाए एक सामान्य बच्चा समझा। ईश्वर कृपा से उसके अंदर जिजीविषा जगाए रखने में उसके पिता की महत्वपूर्ण भूमिका थी। उसे तो जाना ही था। सुबह के आने से पहले वह पूर्व सूचना देकर चला गया – 'आज अंतिम रात है। माँ मुझे गोद में ले लो।'[1] मृदुला सिन्हा ने पुत्र परिमल के भोगे यथार्थ को इस तरह आत्मसात कर लिया था कि कोई विकलांग कहे यह उन्हें सहन नहीं था ,इसलिए वह अपने उपन्यास में विकलांग संस्थान के मुखिया दद्दा के माध्यम से अपाहिज कहकर उपहास उड़ाने वाले के प्रति लिखती हैं – ''मेरे सामने इन्हें अपाहिज मत कहो। सारी दुनिया अपाहिज है शर्मा ..... सारी दुनिया । बड़ी द्रुत गति से भागता–चलता हृष्ट–पुष्ट व्यक्ति भी अपंग है शर्मा! उसकी भावनाएँ तो अपंग है, कुंठित हैं और शारीरिक अपंगता से नैतिक अथवा सांवेगिक अपंगता ज्यादा खतरनाक है शर्मा ! शारीरिक विकलांगों को यह दुनिया सही ढंग से देखती नहीं। शारीरिक अपंग व्यक्ति अपने लिए बेकार होता है, लेकिन ये सांवेगिक अपंग लोग तो दूसरों को बेकार बनाते हैं, सारे समाज को पंगु बना बैठते हैं। सारा समाज पंगु हैं।'[2]

प्रस्तुत उपन्यास में मृदुला सिन्हा ने विकलांगों की सभी समस्याओं को उठाकर विभिन्न पात्रों के माध्यम से निदान का भी सुत्र संग्रथित किया है। वस्तुतः यह उपन्यास विकलांगों की मानसिक स्थिति से समानुभूति के साथ जूझती और उनकी विविध समस्याओं की परिक्रमा और पड़ताल करके प्रायः पूरे परिवेश को जीती, समझती और उनके निदान को निर्दिष्ट करती हुई पात्रों के माध्यम से जीवंत बनाती एक दशक की घटनाओं को स्वानुभूति के सहारे चिंतन देने का सत्प्रयास लेखिका ने किया है। इस दृष्टि से विकलांगता के वृत्त को विनिर्मित करने वाली समग्र औपन्यासिक कृति कही जा सकती है। ज्यों मेंहदी के रंग उपन्यास पर अपना अभिमत देते हुए विकलांग– विमर्श के प्रवर्तक डॉ. विनय पाठक लिखते हैं – ''प्रस्तुत उपन्यास इस तरह प्रस्तुत किया गया है कि यह जीवंत और स्वानुभूति पर आधारित होते हुए भी आदर्श और दुलर्भ चरित्र–योजना के कारण कल्पनाश्रित और वास्तविक से विलग प्रतीत होता है, लेकिन अखिल भारतीय विकलांग चेतना परिषद् से जुड़ने और उसकी समग्र गतिविधियों को निकट से निरखने और पास से परखने के पश्चात मैंने परिषद के पावन प्रांगण को भी देखा है और सेवा–भावी कार्यकर्ताओं के साथ दद्दा अर्थात डॉ. अविनाश के रूप में डॉ. द्वारिका प्रसाद अग्रवाल राष्ट्रीय महामंत्री और श्री सीताराम अग्रवाल राष्ट्रीय संगठन मंत्री के युगल चरित्रों में इनकी छवि को भी महसूसा है। उपन्यास लेखिका ने इस उपन्यास के माध्यम से विकलांग–विमर्श को प्रादर्श दिया है, इसमें दो मत नहीं।''[3]

लेखिका चित्रा मुद्गल का उपन्यास 'आवाँ' विकलांग–विमर्श पर केंद्रित है। यह उपन्यास विकलांगता की व्यथा से आहत लकवाग्रस्त पात्र देवीशंकर पाण्डे की परावलम्बन की पीड़ा की मुखर अभिव्यक्ति है। जिनका दाहिना अंग लकवाग्रस्त होने के कारण वे अपना कार्य करने में अशक्त हैं। उनकी पुत्री नमिता उनकी सेवा करती है। लेखिका उनके कष्ट–साध्य जिन्दगी के बारे में लिखती हैं – ''उन्हें नहलाना तामझाम भरा ही नहीं कष्ट–साध्य प्रक्रिया हैं। स्नानघर में कुर्सी रखकर सहारे से उस पर बिठा उन्हें शिशु की सी सावधानी और सतर्कता के साथ नहलाना पड़ता है। देह का निचला हिस्सा के स्वयं साफ कर सकें, इसकी सुविधा के लिए निकट ही स्टूल पर पानी भरी बाल्टी, मग, साबुनदानी रखना होता है ताकि किसी चीज के लिए उन्हें विशेष प्रयत्न न करना पड़े।''[4]

जैसे चिड़ियाँ के बच्चे पंख निकलते ही घोसले से उड़ने को बेताब रहते हैं वैसे ही पाण्डे जी थोड़ा चलन–फिरने लायक होते ही कार्यालय पहुँच गए। मांस के लोथड़े जैसे शरीर को घसीटते–घसीटते थक चुके थे। प्रमुख महासचिव के पद पर प्रतिष्ठित होने के कारण अन्ना साहब की गाड़ी उन्हें लेने और पहुँचाने के लिए आ जाती है। पिछले समय को याद कर अब उन्हें कार्य में अत्यधिक आनंद आता था, लेकिन यह आनंद अधिक दिन तक न रह सका, इसे दुर्भाग्य ही कहेंगे कि कार्य की अधिकता के कारण उनके दायें भाग में भी लकवा मार गया इस बार उन्हें बोलने में भी कठिनाई होने लगी थी इसलिए लिखकर अन्ना साहब से विनती करते हैं – ''अन्ना साहब मुझे नहीं लगता है मैं और अधिक दिन जीवित रह पाऊँगा, बच्चों और पत्नी की भविष्य की चिंता खाए जा रही है। शेष फंड एवं ग्रेज्युटी की रकम जितनी जल्दी प्राप्त हो जाए, नमी के माँ के नाम, यूनिट ट्रस्ट या जीवन बीमा–निगम की पेंशन योजना में निवेश करा दें। इस घर के जीवन यापन का कोई मामूली आधार तो बने।''[5]

बीमारी व्यक्ति पर आर्थिक बोझ तो डालती ही है लेकिन बीमारी जब विकलांगता का रूप ले लेती है, तो वह आर्थिक के साथ–साथ व्यक्ति एवं परिवार को मानसिक रूप से भी खोखला कर देती है। उपन्यास आवाँ में एक पिता के रूप में दयानंद की

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

मानसिक व्यथा को भी विकलांगता के साथ बखूबी उकेरा है। परिवार के भरण–पोषण के साथ बेटी के विवाह की चिंता भी उन्हें व्यथित करती है फिर भी उनके भीतर आत्मविश्वास की आभा जीवित है,जो उनके व्यक्तित्व में झलकती हैं। बेटी नमिता को लेकर डॉ. कल्पना पाटिल लिखती हैं – ''पाण्डे जी शारीरिक विकलांग है, किन्तु मन से पूर्ण सशक्त हैं। अपनी बेटी को स्वतंत्र निर्णय लेने की स्वतंत्रता ही नहीं देते, उसका मनोबल भी बढ़ाते हैं, विवेक को जागृत रखते हैं, आत्मनिर्भर जीवन पर उनका विश्वास है, मेहनत पर विश्वास करते हैं। अपने परिवार की चिंता उन्हें सताती है। परिवार के भविष्य के लिए आर्थिक निधि रखते हैं। रिश्तेदार मद्द करनी पड़ेगी, यह सोचकर अलग–अलग बहाने बनाते हैं। अस्पताल में विकलांग के साथ निर्दयी व्यवहार होता है। पत्नी को भी विकलांग पति के मरने का ज्यादा दुख नहीं होता। बेटी अपने विकलांग पिता का सम्मान करती है।''[6]

विकलांग–विमर्श के केन्द्र में मृदुला गर्ग कृत उपन्यास 'अनित्य' में भी काजल और श्यामा को विकलांग चरित्र के मध्य सेतु पुरूष के रूप में अविजित विराजमान है। काजल कुरूप है और श्यामा सुंदर इसलिए अविजित काजल को छोड़कर श्यामा को विवाह के लिए चुनता है। तीन पुत्रियाँ और एक पुत्र के जन्म के बाद जब श्यामा के पैर में थ्रोंबोसिस हो गया तब वह विकलांगत का जीवन व्यतीत करते हुए महिनों बिस्तर पर पड़ी रही। डॉ. विनय कुमार पाठक लिखते हैं – विवाह के कुछ वर्षो के पश्चात् विशेषकर श्यामा के विकलांग के रूप में बिस्तरबंद होने के बाद पति–पत्नी औपारिकता का निर्वाह करते हुए आडम्बरपूर्ण जिंदगी व्यतीत करने के लिए विवश प्रतीत होते हैं। दोनों परस्पर असंतुष्ट है और अलग–थलग भी फिर भी औपचारिकता का निर्वाह हो रहा है। व्यक्ति जब रूप को ही जीवन–साथी की कसौटी मान लेता है, तब वही हस्र होता है जो अविजित का हुआ। उसने सुरूपता का चयन किया जो बाद में विकलांगता का पर्यावसान बना और कुरूपता को छोड़ा जो गुणों के कारण उल्लेखनीय बनी।[7]

विकलांगता ऐसी समस्या है, जो कभी न समाप्त होने वाली है। यह समाज के भूतकाल में थी, वर्तमान में है और भविष्य में भी रहेगी । कहते हैं साहित्य समाज का दर्पण होता लेकिन साहित्यकार भी वही लिखता है जो समाज में घटित होता है। विकलांगता को केन्द्र में रखकर अनेक साहित्यकारों ने कहानी और उपन्यास का सृजन किया। इसी क्रम में छायावाद की स्तंभ समाजसेविका, कवयित्री महादेवी वर्मा ने अपने संस्मरणात्मक रेखाचित्रों में गुगिया और आलोपी का जो चित्र खींचा है वह विकलांग–विमर्श की पीठिका प्रमाणित हुई। गुंगिया को यह नाम उसके गुंगेपन के कारण मिला, उसका वास्तविक नाम तो धनपतिया था। महादेवी जी ने गुंगिया के माध्यम से नारी के उस चरित्र की व्यथा–कथा को उकेरा है, जिसमें समर्पण की पराकाष्ठा वात्सल्य और स्नेह का उत्कर्ष तथा धैर्य का अपूर्ण प्रतिमान है। गुंगिया का यह चरित्र बरबस ही पाठकों का ध्यान आकर्षित करता है, जिसमें नारी–चिंतन के अतिरिक्त विकलांग–विमर्श के बीज–वपन की प्रक्रिया भी देखने को मिलती है, जो अनजाने ही महादेवी जी के इस संस्मरण में अभिव्यक्त हो गया है।

अंधे आलोपी की कथा करूणा से आप्लावित है। आलोपी एक दीन–मलीन, दृष्टि विहिन, अकिंचन और विकलांग व्यक्ति है फिर भी उसे आत्म चैतन्यपूर्ण, अपराजेय एवं अप्रतिहत चेतना वाला व्यक्तित्व स्वीकार किया जा सकता है। महादेवी वर्मा ने आलोपीदीन को कर्त्तव्यनिष्ठ और संवेदनशील व्यक्तित्व के रूप में चित्रित किया हैं। चक्षुओं के अभाव में वह प्रज्ञाचक्षु युवक जिस प्रकार प्रकृति प्रदत्त मर्म–चक्षुओं की शक्ति संचित करता है, वह विकलांग व्यक्तित्व का एक अनुपम उदाहरण है। निश्चय ही समाज द्वारा पीड़ित दुर्गम आशा का प्रतीक है।

यदि विकलांग–विमर्श पर आधारित कहानी की बात करें तो 'उषा प्रियंवदा' की कहानी 'टूटे हुए' जन्म से अविकसित शारीरिक और मानसिक विकलांगता के कारण शयन की मुद्रा में शिथिल पड़ा रहता है। 'सिम्मी हर्षिता' द्वारा सृजित 'अनियंत्रित' कहानी एक ऐसे विकलांग बच्चे की कहानी है जो जन्म से ही चिड़िया की तरह लुंज–पुंज दिखाई देता है। 'रेनू यादव' द्वारा सृजित कहानी 'दबे पाँव' ऐसी जन्मांध बालिका मेघना की है जो अपनी ज्ञानेनिन्द्रयों से कदमों की आहट, व्यंजनों को सुंगध और परिचित स्थल की ऊँच–नीच को पहचान कर बेरोक–टोक आने जाने में माहिर है। सुरक्षा घेरे में रहने के बावजूद घर में ही असुरिक्ष है। 'शिवानी' की कहानी 'कालू' का नायक 'कालू' जो जन्मतः सूरदास है लेकिन अपनी मधुर गायकी विशिष्ट अंदाज से जन–मन को मोहित कर लेता है। 'डॉ. रेशमी पाण्डा मुखर्जी' को कहानी 'देवी' पर डॉ. विनय कुमार पाठक का अभिमत है – 'प्रमुख पात्र जन्मांध देवी अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त पहलवान रघुवीर की बेटी और उसकी मृत्यु पर्यन्त विधवा माँ की सपनों की एक मात्र सहारा थी। ससुराल की लांछना से आहत उसने मायके आकर वृद्ध पिता के फूलों के व्यवसाय को खूब चमकाया और ब्रेल–लिपि से देवी को शिक्षा की ओर प्रवृत्त किया।''[8]

इसी क्रम में 'प्रमिला वर्मा' की कहानी 'प्रतिबिम्ब' में गूंगी–बहरी प्रथम संतान 'इरा' के उपचार और उसकी शिक्षा के लिए माँ अंजू पूरा समय समर्पित कर देती है। इरा पढ़ने और चित्रकला प्रदर्शनी से वह चर्चित हुई और अब मिस यूनिवर्स में सहभागिता हेतु सड़क पार करते समय सिंग्नल को न समझने की वजह से मोटर सायकल से गिरकर संसार से जुदा हो गयी। 'अभिशप्त' कहानी दीप्ति खंडेलवाल द्वारा सृजित है। प्रस्तुत कहानी मध्यमवर्गीय विकलांग पिता के लकवे से आहत होने पर घर की आर्थिक स्थिति चरमरा जाती है जिसे उसकी बड़ी बेटी मोना बड़े मनोयोग से सहेजती है।

'उन दोनों के बीच' कहानी में 'राजी सेठी' ने विकलांग नायक के दाहिने भाग में पक्षाघात होने के कारण उसकी परवशता, असहायता और एकाकीपन से उपजी मनोदशा की करूण व्यथा तो है ही साथ ही उसकी पत्नी को बेचारगी, लाचारगी एवं व्याकुलता की वृहद व्यथा भी है। 'दिव्या माथुर' की आशियाना, 'डॉ. सुरेश ठक्कर' की तीसरा पहिया, डॉ. कमोद जैन की दौड़ते कदम, 'जया जादवानी' की 'साक्षी', डॉ. रेखा पालेश्वर' की 'खुली आँखों का दुख' चंद्रकांता की 'मामला घर का' डॉ. भारती अग्रवाल–'मैम से मम्मी तक का सफर', रेखा ठाकुर–'चलते जाना सीखलो', अनीता श्रीवास्तव–घर, सुधा गोयल–'लहरों के बीच', मंजू चौरसिया–आत्मबल, आशा पाण्डेय–मुट्ठी भर प्रेम, ज्योत्सना कपिल–झुलसे पंखों की उड़ान, अनुपमा दास–पूर्णता की ओर, विकलांग कौन? अर्चना पाण्डेय–जीवन की चुनौतियाँ इत्यादि के साथ मेरी कहानी–हौसलो की उड़ान, मंदबुद्धि, जीत, गोरखधाम एक्सप्रेस आदि कहानियाँ विकलांगता को केन्द्र में रखकर लिखी गयी हैं, जो अब विकलांग–विमर्श को पीठिका प्रमाणित हो रही है।

सिर्फ कहानियां ही नहीं बल्कि विकलांगता को केन्द्र में रखकर, लघु कथाओं एवं काव्यों का सृजन भी किया जा रहा है जिसमें महिला साहित्यकारों का अमूल्य योगदान है। महिला साहित्यकार के रूप में शकुंतला शर्मा देश–विदेश में छत्तीसगढ़ का नाम रोशन कर रही हैं। इनकी रचनाओं में इक्कीसवीं सदी के नव्य–विमर्श का वृत्त विनिर्मित करने का उद्यम उपस्थित है। छत्तीसगढ़ी की विकलांग– विमर्श विषयक लघु कथाओं का संग्रह 'करगा' इनकी चर्चित कृति है और अब इसके बाद बेटी बचाओ शीर्षक से विकलांग–विमर्श के आख्यानक गीतों का संग्रह प्रकाशित करना महत्वपूर्ण घटना का सूत्रपात ही। इन गीतों में जो जीवन दर्शन प्रस्तुत

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e–I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-II, Issues-36, YEAR-April-June. 2025

किया है, वह अनुपम है, अद्भुत है। विकलांगों के जीवन को जांचकर और आदमियत को ऑककर आख्यानक गीतो का जो ताना–बाना रचा है वह हिन्दी काव्य जगत के लिए भी नयी भावभूमि प्रदान करेगी। जब विकलांग–विमर्श पर आधारित कविताओं को बात आती है तो 'आत्मबल की वंदना' कविता संग्रह को भी नहीं विसराया जा सकता। इसमें अनेक महिला कवयित्रियों ने विकलांग–विमर्श पर कविता लिखकर इस कृति को अमूल्य बना दिया है। जिनमें प्रमुख हैं – डॉ. रेखा पालेश्वर– मैं सक्षम हूँ, डॉ. नीलिमा मिश्रा–जिंदगी इम्तिहान होती है, अगर विकल हैं अंग तुम्हारे, डॉ. रत्ना चटर्जी–एहसास एक कोशिश, डॉ. वंदना सिंह–उपलाब्धियाँ कितनी बेमानी, तुम पूर्ण हो, डॉ. बी. नंदा जागृत– पैरों की अंगुलियाँ, शेखर, डॉ. प्रीति प्रसाद–कोई तो हो ऐसा, विकलांगता अभिशाप नही, श्रीमती रेखा ठाकुर–शिकायत नहीं प्रभु से, अक्षम नहीं सक्षम, श्रीमती अनुपमा दास–विकलांग नहीं दिव्यांग हूँ मैं, श्रीमती तुलसीदेवी तिवारी–गंगा, एक हुए न, श्रीमती नविता ठाकुर –अधूरा तन–पूरा मन, श्रीमती बसंती मिश्रा–मन से न हो विकलांग, विदुषी आमेटा–आत्मबल की वंदना, गीतिका वेदिका– सखे मेरी अथ व्यथा कथा, शशिदीप–न कहना हम मायूस है ममता सोनी– मुकाम, डॉ. नीना शर्मा–सपनों की गठरी, रश्मि रामेश्वर गुप्ता–तू कभी न हिम्मत हार, अंजली शर्मा–मेरी खामोशियाँ, करूणा पाण्डेय–जग की सन्तति, गीता नायक–हम भी इंसान है इत्यादि कविताओं के केन्द्र में विकलांग–विमर्श की व्यथा–कथा, उपेक्षा–पीड़ा के साथ उनके संघर्ष, जीवटता एवं जिजीविषा को उकेरा गया है। जहाँ तक मुझे पता है कि अब तक विकलांग–विमर्श पर आधारित कविताओं का संकलन अभी तक नहीं आया है। यदि सभी महिला साहित्यकारों में मैं स्वयं को शामिल करूँ तो विकलांग–विमर्श को लेकर मेरी दो सम्पादित कृति–'आत्मबल की वंदना' (कविता संग्रह), इसमें बतौर सह संपादक डॉ. रेखा पालेश्वर और विकलांग विमर्श की कहानियाँ भाग–2 (कहानी संग्रह) इसमें बतौर सह संपादक श्रीमती अनुपमा दास जी का भी कार्य सराहनीय है। विकलांगता के क्रम में स्वरचित कृति ''मंजिले और भी हैं..... ।'' जिनमें स्थानीय राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर के विकलांगों के साहस एवं संघर्ष की व्यथा–कथा है जिन्होंने संघर्षो में तपकर अपने हौसले की उड़ान भरी हैं' तथा यह साबित किया है कि विकलांगता पर रोना नहीं है बल्कि हम विकलांगों के लिए भी अनेक मंजिल है और उस मंजिल की तरफ बढ़ाना हमारा कर्त्तव्य है। यदि मैं स्वरचित उपन्यास 'स्वीकरण' की बात न करूँ तो शायद विकलांग–विमर्श का यह शोधपत्र अधुरा ही रह जाएगा। डॉ. सुरेश माहेश्वरी का मत है–''स्वीकरण' डॉ. अनिता सिंह द्वारा विकलांगता पर आधारित है, जिसके मुख्य पात्र वास्तविक हैं। विकलांग–विमर्श इक्कीसवीं सदी के प्रथम दशक के दस्तक के साथ अविर्भूत हुआ जिसके मूल मे लिंग और जाति से रहित विशुद्ध मानवतावादी दृष्टिकोण प्रमुख रहा है। किन्नर–विमर्श के पूर्व और अब समानांतर चलने वाला यह विमर्श विगत दो दशकों से चर्चा में है। विकलांगों का पुट लिए उपन्यास तो प्रचुर परिणाम में प्राप्त होते हैं लेकिन समग्र रूपेण विकलांगता पर केन्द्रित प्रथम उपन्यास के रूप में मृदुला सिन्हा के 'ज्यों मेंहदी को रंग' (1981) ऐसी ऐतिहासिक कृति है जिसने पाठकों को प्रथम बार विकलांगता की संवेदना को समझने की दृष्टि विकसित की। इसके बाद फिर इस परम्परा का समग्रतः दूसरा उपन्यास दृग्गत नहीं हुआ। इस चुनौती को स्वीकार करके डॉ. अनिता सिंह ने 'स्वीकरण' को मूर्त रूप प्रदान करके इस दिशा को पुनः गति देने का महती कार्य किया है, जिसके लिए उन्हें हृदय की गहरायी से बधाई देता हूँ। इस उपन्यास में उन्होंने यर्थाथ के साथ कल्पना और विचार के साथ संवेदना का जो सामंजस्य स्थापित किया है, वह इस औपन्यासिक कृति का वैशिष्ट्य है और विकलांग–विमर्श का गंतव्य–मंतव्य भी। आज जबकि यह विषय देश की सीमा के अतिक्रमण की स्थिति में है, 'स्वीकरण' का प्रकाशन महत्वपूर्ण उपलब्धि के रूप में समाहित होगा। ऐसी मेरी मान्यता है।''[9]

कहते हैं कि एक शिक्षा ही है जो व्यक्ति के जीवन को बदल सकती है। आज शिक्षा के प्रसार और मानवतावाद के कारण विकलांगों के प्रति लोगों का नजरिया बदलने लगा है। अभिभावक विकलांगों को भी सामान्य संतान सदृश स्वीकार कर उनका लालन–पालन कर रहे हैं। इस बदलाव में शिक्षा के साथ साहित्य का योगदान नहीं विसराया जा सकता है। अब विकलांग–विमर्श पर साहित्य संगोष्ठी हो रही हैं उपन्यास लघुकथा, कहानी, कविता आदि विषयों पर विकलांग–विमर्श विषयक सृजन हो रहा है, जिसमें महिला साहित्यकारों की सहभागिता भी है और आगे भी रहेगी।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. ज्यों मेंहदी के रंग–मृदुला सिन्हा, पूर्व कथन के अंतर्गत।
2. ज्यों मेंहदी के रंग–मृदुला सिन्हा, पृष्ठ–32.
3. विकलांग– विमर्श : दशा और दिशा : डॉ. विनय कुमार पाठक।
4. आवाँ– चित्रा मुद्गल, पृष्ठ–26.
5. आवाँ– चित्रा मुद्गल, पृष्ठ 247.
6. विकलांग–विमर्श का वैश्विक परिदृश्य, पृष्ठ 541–42.
7. विकलांग– विमर्श दशा और दिशा–डॉ. विनय कुमार पाठक, पृष्ठ–110.
8. विकलांग– विमर्श दशा और दिशा–डॉ. विनय कुमार पाठक, पृष्ठ–153.
9- स्वीकरण– डॉ. अनिता सिंह, फ्लैप से उद्धृत।

*****